भव्य राम मंदिर और कम्बोडिया का अंगकोर वाट हिन्दू मंदिर

लेखक अनिल चावला

कम्बोडिया की भाषा में अंगकोर वाट का अर्थ होता है "मंदिर नगर"। लगभग चार सौ एकड़ में फैला हुआ यह विश्व का विशालतम धार्मिक स्थान है। इसका निर्माण ईस्वी १११३ से ११५० के मध्य एक विष्णु मंदिर के रूप में सम्राट सूर्यवर्मन द्वितीय द्वारा करवाया गया था। इतना विशाल हिन्दू मंदिर ना इससे पूर्व कभी बना और ना ही इसके बाद आजतक कभी बन पाया। लेकिन आश्चर्यजनक बात यह है कि इस मंदिर के निर्माण के बाद शीघ्र ही कम्बोडिया से हिन्दू धर्म विलुप्त हो गया और निर्माण के पाँच दशक में ही यह विशाल मंदिर बौद्ध मंदिर में परिवर्तित हो गया। आज अंगकोर वाट की पहचान एक बौद्ध मंदिर के रूप मैं है और कम्बोडिया में हिन्दू नाममात्र को भी नहीं हैं।

आज प्रातः अंगकोर वाट की याद मुझे तब आयी जब मैनें समाचारपत्र में अयोध्या में निर्माणाधीन राम मंदिर हेतु इक्कीस सौ करोड़ रुपये से अधिक एकत्र होने के बारे में पढ़ा। कहते हैं कि जो इतिहास से सबक नहीं लेते वे अपने दुखद इतिहास को दोहराने को मजबूर होते हैं। कहीं ऐसा तो नहीं कि हम हिन्दू एक बार पुनः एक अतिविशाल मंदिर नगर या अंगकोर वाट का निर्माण करने जा रहे हैं। कहीं हम अतिउत्साह में वही गलती तो नहीं दोहराने जा रहे जो कि सम्राट सूर्यवर्मन द्वितीय ने आज से नौ शतक पूर्व की थी।

आगे कुछ भी कहने के पहले मैं यह स्पष्ट करना चाहूँगा कि मैं राम मंदिर निर्माण का पक्षधर हूँ और राम मंदिर के आंदोलन के काल में मैंने भाजपा के कार्यकर्ता के रूप में में एक अत्यंत सूक्ष्म योगदान दिया था। आज राम मंदिर बनना तय हो चुका है और अब चर्चा का विषय केवल मंदिर के आकार, विशालता, भव्यता, स्वरुप, परिकल्पना तथा उसके हेतु लगने वाली धनराशि को लेकर है।

भारतवर्ष में विभिन्न स्थानों पर अनेक मंदिर हैं। मैनें जब भी किसी भी प्रमुख मंदिर के इतिहास को जानने का प्रयास किया तो पता लगा कि वह पिछले एक हजार वर्षों के दौरान बना है। मेरी जानकारी में कोई भी ऐसा विशाल भव्य मंदिर नहीं है जिसका निर्माण ईस्वी १००० के पूर्व हुआ हो। हो सकता है कि मेरी जानकारी अधूरी हो और आप किसी ऐसे मंदिर को जानते हों जो विशाल और भव्य है और ईस्वी १००० से पहले निर्मित हो। निश्चय ही ऐसा प्राचीन मंदिर अपवाद होगा।

ईस्वी १००० के पूर्व हिन्दू धर्म पूरे यूरोप और एशिया का प्रमुख धर्म था। लेकिन उस काल में हिन्दू धर्म में विशाल भव्य मंदिर निर्माण की प्रथा नहीं थी। उस काल में हमने विद्व्ता, अध्ययन, पठन-पाठन, एवं शिक्षा के विशाल केंद्र बनाये। उज्जैन, वाराणसी, नालंदा इत्यादि कुछ ऐसे केंद्र थे। इन केंद्रों के पांडित्य पर पूरे विश्व की आस्था थी। इन केंद्रों की यात्रा करना तीर्थ माना जाता था। कहा जाता है कि जब नालंदा के पुस्तकालय को आक्रामकों ने जलाया तो वह अग्नि एक वर्ष से अधिक समय तक दधकती रही थी। इससे उस पुस्तकालय की विशालता का अंदाजा लगाया जा सकता है।

ऐसा नहीं है कि उस काल में मूर्ति पूजा नहीं थी। तब भी मूर्ति को एक प्रतीक के रूप में मान्यता प्राप्त थी। मूर्ति प्रभु या ब्रह्म को मानस में स्थापित करने में सहायक अवश्य है। मूर्ति स्वयं में आराध्य नहीं है। उसी प्रकार एक विद्वता के केंद्र में मंदिर और उसमें स्थापित मूर्तियाँ एक महत्त्वपूर्ण स्थान तो रखते हैं पर उस विद्व्ता के केंद्र का सर्वस्व नहीं हैं और उस केंद्र का मूलाधार भी नहीं हैं। इसी कारण उज्जैन हो या वाराणसी, वहां मंदिर तो अत्यंत प्राचीन काल से विद्यमान थे पर वे मंदिर विशाल नहीं थे, और उनमें स्थापित मूर्तियाँ भी विशाल कतई नहीं थी। आज भी जो हिन्दू आस्था के केंद्र मंदिर हैं वहाँ विशाल मूर्तियाँ नहीं हैं। चाहे उज्जैन का महाकाल मंदिर हो, चाहे वैष्णो देवी का मंदिर हो, चाहे तिरुपति के बालाजी - कहीं भी मूर्ति विशालकाय नहीं है।

यह एक विचित्र विडंबना प्रतीत होती है कि हिन्दुओं के परास्त होने का क्रम ईस्वी १००० के बाद प्रारम्भ हुआ और इसी काल में विशाल मंदिरों के निर्माण का क्रम भी प्रारम्भ हुआ। यह वो काल था जिस में ऋषि आश्रमों एवं विश्वविद्यालयों का स्थान शनैः शनैः विशाल मंदिरों ने ले लिया। इस काल में मंदिरों के

तहखानों में स्वर्ण भण्डार एकत्र होते गये और हिन्दू गरीब, मजबूर और गुलाम होता गया। चाहे अंग्रेजों के विरुद्ध हो या उसके पूर्व के संघर्ष हों, किसी प्रमुख मंदिर ने किसी प्रकार का सहयोग नहीं किया।

हिन्दुओं के पुनरुत्थान या पुनःजागरण में चार नामों का प्रमुखता से उल्लेख किया जाता है - गुरु गोविन्द सिंह, छत्रपति शिवाजी महाराज, महर्षि दयानन्द सरस्वती तथा स्वामी विवेकानंद। इन चारों को मंदिरों के तत्कालीन मठाधीशों का तीखा विरोध सहना पड़ा था। चारों को मठाधीशों के विरुद्ध विद्रोह का बिगुल बजाना पड़ा था। आज भी अधिकतर प्रमुख मंदिरों के मठाधीश इन चारों को सम्मान देने को तैयार नहीं हैं। यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगा कि यदि ये चार नहीं होते तो आज ना तो भारत में हिन्दू होते, ना ही भारत स्वतंत्र होता और ना ही देश में कोई प्रमुख मंदिर होता।

राजनैतिक दृष्टि से देखें तो गाँधी जी के परिदृश्य में आने के पूर्व भारत के स्वतंत्रता संग्राम में हिन्दू महासभा और आर्य समाज ने प्रमुख भूमिका निभाई थी। इन दोनों संगठनों में से किसी को भी मंदिरों के मठाधीशों से किसी प्रकार का सहयोग या समर्थन प्राप्त नहीं था। ना ही उस काल में इन दोनों संगठनों ने मंदिरों को सुदृढ़ करने की कभी कोई बात भी की। आर्य समाज द्वारा तो मंदिरों का विरोध सर्वविदित है। हिन्दू महासभा के प्रमुख नेता पंडित मदनमोहन मालवीय थे। पंडित जी ने वाराणसी में हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना की, किसी विशाल मंदिर की नहीं।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की जड़ें हिन्दू महासभा में हैं। जिस काल में हिन्दू महासभा दिशाहीन हो कर रूढ़िवादी बन गयी थी, संघ ने एक समरसता आधारित विकासोन्मुख हिन्दू समाज की बात की। संघ ने जाति के बंधनों को तोड़ने की पहल की। संघ के शिविरों, शाखाओं और कार्यालयों में हर जाति का व्यक्ति समान सम्मान का हकदार माना जाता था और है। संघ ने चारों महापुरुषों - गुरु गोविन्द सिंह, छत्रपति शिवाजी महाराज, महर्षि दयानन्द सरस्वती तथा स्वामी विवेकानंद - को सम्मानयोग्य माना और मठाधीशों के विरोध को दरकिनार करने का साहस प्रदर्शित किया। कहने का तात्पर्य यह है कि संघ ने हिन्दू हितों की बात तो की पर मंदिरों के मठाधीशों के अंकुश को नकारा भी। इसी कारण संघ पर अधार्मिक होने का आरोप भी लगा।

संघ ने स्वयं को सदा राष्ट्रवादी घोषित किया और मंदिरों के मठाधीशों से स्वतंत्र अस्तित्व सदा बनाये रखा। राम जन्मभूमि आंदोलन मूलतः संघ का नहीं था। संघ इस आंदोलन के साथ बहुत बाद में केवल इसलिए जुड़ा क्योंकि यह हिन्दू अस्मिता का प्रश्न बन गया था। संघ ने कभी किसी मंदिर निर्माण या प्रबंधन में सक्रिय भाग नहीं लिया। लेकिन आज संयोगवश या परिस्थितिवश संघ को मंदिर निर्माण में सक्रिय भूमिका निभानी पड़ रही है। आज मंदिर हेतु जो इक्कीस सौ करोड़ से अधिक की विशाल राशि एकत्र हुई है उसमें संघ के स्वयंसेवकों और भाजपा के लाखों कार्यकर्ताओं का परिश्रम एवं योगदान है।

विशाल राशि से ऐतिहासिक द्वंद्व नहीं सुलझ जाते हैं। हिन्दू समाज के सम्मुख आज से डेढ़ सौ वर्ष पूर्व एक ओर विभिन्न शंकराचार्य और मठाधीश थे तथा दूसरी ओर वह परम्परा थी जिसमें गुरु गोविन्द सिंह और छत्रपति शिवाजी महाराज ने रक्त बहाया था। हिन्दू समाज गुलामी की बेड़ियों को काट पाया क्योंकि उसके एक प्रबुद्ध वर्ग ने स्वामी दयानन्द सरस्वती एवं स्वामी विवेकानंद का मार्ग चुना और शंकराचार्यों एवं मठाधीशों से मुँह फेर लिया।

विशाल राशि से ऐतिहासिक द्वंद्व नहीं सुलझ जाते हैं। हिन्दू समाज के सम्मुख आज से डेढ़ सौ वर्ष पूर्व एक ओर विभिन्न शंकराचार्य और मठाधीश थे तथा दूसरी ओर वह परम्परा थी जिसमें गुरु गोविन्द सिंह और छत्रपति शिवाजी महाराज ने रक्त बहाया था। हिन्दू समाज गुलामी की बेड़ियों को काट पाया क्योंकि उसके एक प्रबुद्ध वर्ग ने स्वामी दयानन्द सरस्वती एवं स्वामी विवेकानंद का मार्ग चुना और शंकराचार्यों एवं मठाधीशों से मुँह फेर लिया।

इसे एक ऐतिहासिक विडंबना ही कहेंगे कि गुरु गोविन्द सिंह, छत्रपति शिवाजी महाराज, स्वामी दयानन्द सरस्वती एवं स्वामी विवेकानंद का अनुसरण करने वालों हम लोगों के कन्धों पर राम जन्मभूमि मंदिर निर्माण का दायित्व आ गया है। इस अत्यंत महत्वपूर्ण दायित्व का निर्वहन हुए हमें हिन्दू की पुनरुत्थान यात्रा को स्मरण लगातार करना चाहिए। हम यह कतई नहीं भूल सकते कि यात्रा में हमें बाहरी लोगों से कम और अपने ही समाज के तथाकथित ठेकेदारों से अधिक संघर्ष करना पड़ा था। यह मंदिर दोनों योद्धाओं एवं दोनों स्वामियों द्वारा रखी गयी नींव का परिणाम है। शतकों तक हिन्दुओं की जिस विकासोन्मुख विचार धारा ने बलिदान दिए, यह मंदिर उनकी सफलता का उत्सव होना चाहिए; ना कि मठाधीशों की सत्तावृद्धि का सुनहरा अवसर।

राम जन्मभूमि मंदिर हिन्दू पुनरुत्थान यात्रा का ऐसा सोपान होना चाहिए जिससे हिन्दू और अधिक सशक्त, समृद्ध एवं सम्मानित हो कर उभरे। हमें एक आस्था के केंद्र का निर्माण करना है, एक पर्यटन स्थल का नहीं। हमें यह याद रखना होगा कि पराभव के पूर्व भक्ति मार्ग हिन्दू धर्म का प्रमुख अंग नहीं था। पिछले डेढ़ सौ वर्षों में जो हिन्दुओं ने प्रगति की है वह भक्ति मार्ग से अलग हट कर विद्व्ता एवं शौर्य का मार्ग अपनाने से ही संभव हो पायी है। वैसे भी राम कर्म, शौर्य एवं मर्यादा के पुरुष हैं। पूरी वाल्मीकि रामायण में एक बार भी राम पूजा नहीं करते हैं। राम विचार विमर्श करते हैं, त्याग करते हैं, कर्म करते हैं और शास्त्र धारण करते हुए युद्ध करते हैं। हिन्दुओं की आने वाली पीढ़ियों को राम के पथ पर अग्रसर होने की प्रेरणा यदि राम जन्मभूमि मंदिर दे सके तो वह वास्तव में राम का मंदिर होगा।

राम का मंदिर निर्माण करते हुए हमें ऋग्वेद की यह बात सदा याद रखनी चाहिए कि जहाँ ज्ञान और विद्या की धारा बहती है, वहाँ देवता उस सोम (ज्ञान) की धारा का रसपान करने खिंचे चले आते हैं। हमें यह सुनिश्चित करना चाहिए कि राम जन्मभूमि पर सोमधारा अविरल बहे जिससे हिन्दू समाज और हमारा भारत देश निरन्तर लाभान्वित हो। जब ज्ञान धारा बहेगी तो वहां देवों का वास होगा और जन्मभूमि स्थान देश और विश्व की आस्था का केंद्र बन कर उभरेगा।

भव्यता का आग्रह त्याग कर यदि हम अपने ऋषि मुनियों के आदर्शों को स्मरण कर आत्मसात कर मंदिर की परिकल्पना करेंगे तो मंदिर वास्तव में दैविक स्थान होगा। ऐसा न हो कि अतिउत्साह में राम जन्मभूमि के नाम पर रावण की सोने की लंका का निर्माण हो जाए। केवल राम की मूर्ति की स्थापना से राम की आत्मा किसी भव्य इमारत में निवास नहीं कर लेगी। राम की आत्मा को प्रसन्न करने के लिए सादगी, सरलता चाहिए; भव्यता और ऐश्वर्य नहीं। राम ऋषि के आश्रम में बसते हैं, राम अपनी देव प्रवृत्ति के अनुरूप विद्वान् के चरण में बैठने में आनंदित होते हैं और सोने के स्वर्णमंडित राजमहल में असहज अनुभव करते हैं।

मुझे नहीं मालूम कि राम जन्मभूमि मंदिर की परिकल्पना क्या और कैसी है। मेरा विनम्र सुझाव है कि राम जन्मभूमि मंदिर राम के व्यक्तित्व के अनुरूप छोटा सादगीपूर्ण एवं सरलता का सन्देश देने वाला हो। इस मंदिर के आस-पास एक विशाल विश्वविद्यालय बनाया जाए जो विश्व की महानतम यूनिवर्सिटीज से भी बड़ा और बेहतर हो। जिस प्रकार पंडित मदनमोहन मालवीय ने बनारस हिन्दू

विश्वविद्यालय की स्थापना की थी ठीक उसी प्रकार राम जन्मभूमि न्यास एक राम जन्मभूमि हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना करे जिसमें सभी विधाओं के सर्वश्रेष्ठ विद्वान एकत्र किये जाएँ और हिन्दू विद्यार्थियों की निशुल्क शिक्षा एवं आवास की व्यवस्था की जाए।

यह उचित होगा कि अयोध्या आने वाले वर्षों में एक ऐसे विश्वविद्यालय के लिए जाना जाए जो एक मंदिर का अभिन्न अंग है। अयोध्या के राम विद्वता के पुजारी थे, उनके राज्य में तथा उनके प्रश्रय में अध्ययन, पठन पाठन का क्रम अविरल चलता था - राम जन्मभूमि का मंदिर इस ऐतिहासिक सत्य का जीवंत उदाहरण होना चाहिए। यदि ऐसा हुआ तो आने वाले एक हजार वर्षों तक भी राम जन्मभूमि मंदिर आस्था का केंद्र बन कर पूरे हिन्दू समाज तथा विश्व को समृद्ध एवं सशक्त करता रहेगा। और यदि अयोध्या केवल एक मंदिर नगर बन जाएगी तो उसका हश्र भी संभवतः वही होगा जो कम्बोडिया के मंदिर नगर अर्थात अंगकोर वाट का हुआ।

अनिल चावला

२८ फरवरी २०२१

सर्वाधिकार पूर्णतः मुक्त

ANIL CHAWLA is an engineer and a lawyer by qualification but a philosopher by vocation and an advocate, insolvency professional & strategic consultant by profession. His works can be seen at www.samarthbharat.com To know about his professional work, please visit www.indialegalhelp.com and www.hindustanstudies.com